नागकेसर हवा

शान्ति सुमन

कार्यक्रमों में जाकर आपस में चर्चा होती थी कि कौन-कौन कहाँ गीत-नवगीत लिख रहा है। मंचों पर नयी-नयी कवयित्रियाँ बहुत मिल जाती थीं। कविता वे कम या बेकार लिखती थीं, पर कवियों की मित्र अधिक हो जाती थीं। कभी-कभी शान्ति सुमन का नाम भी आ जाता था, पर कभी भेंट नहीं हुई थी। एक बार वाराणसी के पास किसी छोटे से नगर में मंच पर शान्ति जी भी थीं। मैं प्रसन्न हुआ कि चलो जिसकी इतनी प्रशंसा सुनी है तो आज सुनें भी। शान्ति जी ने अपना लोकप्रिय गीत ही पढ़ा था – 'थाली उतनी की उतनी ही छोटी हो गई रोटी/कहती बूढ़ी दादी अपने गाँव की।' मैं इस गीत के सौन्दर्य और विस्तार-प्रस्तुति पर सिहर उठा था। नवगीत का सुन्दरतम् गीत मुझे लौटते में यात्रा भर में गूँजता रहा। मैं जैसे धन्य हो गया। इस गीत का सौन्दर्य थाली और रोटी में नहीं है – 'कहती बूढ़ी दादी' में है। छोटी उम्र की बेटी या बहू को रोटी, थाली के नाप का पता नहीं हुआ है। ये अनुभूति की चिन्ता और दुख उसे पता है जो 60-70 वर्ष से इसे दृष्टि से अनुभव कर रही है। मैं इस चिंतित अनुभूति के विस्तार पर निहाल हो गया। इसके बाद हर पत्रिका में मैं शान्ति सुमन को ढूँढता रहा। अनेक पत्रिकाओं में पढ़कर सोचता रहा कि चलो एक कवयित्री तो हिन्दी कविता को मिली। शुभश्री सुमित्रा कुमारी सिन्हा के बाद और किसी ने इतना प्रभावित नहीं किया। शान्ति सुमन ने नवगीत धारा को अपने मन-प्राण में पूरी तरह बसा लिया है।

वर्तमान का पैसे का खेल, राजनीति की रेल-पेल, निर्धन समाज से विमुख अरबपति बनने के खेल, बहकते हुए संवाद-भाषण, नेताओं के जुलूस, निर्धन का जीवन – सभी कुछ आजादी के उपहार हैं। शान्ति जी ने इस सम्पूर्ण जीवन-क्रम को अपने नवगीत, जनगीत का आधार बनाया है।

— भारतभूषण

नागकेसर हवा

शान्ति सुमन

नागकेसर हवा

शान्ति सुमन

प्रकाशक
ईशान प्रकाशन
मीठनपुरा, क्लब रोड, रमना
मुजफ्फरपुर – 842002 (बिहार)

नागकेसर हवा

गीतकार	:	**शान्ति सुमन**
प्रकाशक	:	**ईशान प्रकाशन** मीठनपुरा, क्लब रोड, रमना, मुजफ्फरपुर - 842002 (बिहार) दूरभाष : 0621-2270895
आवरण	:	चित्र-चयन : शालीना वर्मा
प्रथम संस्करण	:	2011
मुद्रक	:	**शिक्षा भारती मुद्रणालय** 1/27, काशीडीह जमशेदपुर - 831001
वितरक	:	36, ऑफिसर्स फ्लैट्स, जुबली रोड, नार्दर्न टाउन, जमशेदपुर - 831001, झारखण्ड, मो० - 9430917356
©	:	**शान्ति सुमन**
मूल्य	:	150 रुपये

NAGKESHAR HAWA

A collection of poems by Shanti Suman **Rs.** 150 रुपये

अपनी प्रिय पौत्री

शुभायुष्मती शालीना

को

उसके अगले

वसन्त पर

शारदीय शुभ्र हास के लिये

अन्तरा

मेरे गीतों पर पाठकों एवं आलोचकों ने दो प्रकार के विचार व्यक्त किये हैं। एक वर्ग है जो मुझको नवगीतकर्त्री के रूप में देखता और प्रतिष्ठित करता है। दूसरा वर्ग मेरे गीतों को जनवादी गीत मानता है। पहला वर्ग मानता है कि बदलते हुए समय और समाजार्थिक परिस्थितियों के कारण मेरे गीतों में बदलाव आये और ये श्रमजीवी संघर्षरत जन के त्रास-संताप और व्यवस्था के निश्चर्म कर देने की हद तक बढ़े शोषण-दमन, अत्याचार और विसंगतियों से मुक्ति की बेचैनियों से भरे गीत बन गये। पहला वर्ग मानकर चलता है कि नवगीत की पहली कवयित्री होने के कारण मेरे गीत नवगीत की ही निर्मिति हैं। मेरा नवगीत दूर-दूर तक मेरे गीतों के साथ चलता रहा है। उनको यह प्रिय नहीं है कि मेरे गीतों पर जनवाद की कोई मुहर लगे। उन्होंने इतना तक कह दिया कि मैं ऐसी गीत कवयित्री हूँ जिसने स्वयं अपने बिम्ब को तोड़ा है। वे जनवाद को राजनीति के ढाँचे में रखकर देखते हैं, इसलिये यह सोचते ही नहीं कि समकाल का यह शोषण-दमन, भूख, गरीबी, बेरोजगारी और अमानवीय स्थितियाँ - यहाँ तक की हिंसा, अराजकता आदि को देखकर एक संवेदनशील व्यक्ति/रचनाकार की क्या पीड़ायें हो सकती हैं। उस आग में जलते रहने पर तो कैसी भी कोमलता नष्ट होने लगती है और विरोध तथा विद्रोह उसकी अभिव्यक्ति के हिस्से बन जाते हैं। मगर संवेदनायें नष्ट नहीं होतीं। उस भयानक निर्ममताओं के बीच भी संवेदना/आत्मीयता /आसक्ति - जीवन से सभी प्रकार के लगाव बचे रहते हैं। माँ-बाप की ममता, पत्नी का प्रेम, बच्चों की हँसी और सारे पारिवारिक आसंग हमारी साँसों में बसे होते हैं। ऐसा नहीं है कि जनवादी गीतों में संवेदनाओं से भरे आत्मीय बिम्बों, अनुभूतियों और अनुभवों की कमी है। अभावों से भरे गरीब-किसान-मजदूर के जीवन का धन तो प्रेम ही होता है जो कठिन से कठिन क्षणों में उनको जीवित रहने, श्रम करने और समय-समाज के साथ पूरी दुनिया को बचा लेने का साहस देता है।

मेरे मन में अपने गीतों को लेकर कोई दुविधा नहीं है। देश-दुनिया के संघर्षजीवी जन के सुख-दुख, हर्ष-विषाद, आशाकांक्षा और बेहतर जिन्दगी, बेहतर दुनिया के लिये उनकी मुक्ति-चेतना ही मेरी प्रतिबद्धता

है। दूसरी ओर इस प्रतिबद्धता के पीछे मेरे गीतों में उन समस्त भावनाओं, अनुभूतियों, आत्मीयता और कोमलतम संवेदनाओं को बचा लेने का मन भी दीखता है जिसके बिना न तो जीवन जीने योग्य होता है और न हमारी मनुष्यता सुरक्षित हो सकती है। उस मन के बिना हमारे सारे संबंध अर्थहीन हो जाते हैं। फिर तो फूल भी सुगंधित नहीं लगते और न जल ही निर्मल होता है। किसी भी कठोर परिस्थिति या हिंसक स्थितियों के लिये मैंने बाघ, भालू, सियार आदि हिंस्र जीवों का आश्रय नहीं लिया और न लहू बहाने की स्थिति मेरे गीतों में आई है। मैंने अमानवीय कठोरता को भी मानवीय नरम-कोमल तरीके से कहने का रास्ता अपनाया है। लहू के बहने से मुझको भय लगता है। कदाचित् यह भय मेरी कोमलता और आत्मीयता का स्रोत बनता है।

मेरा पहला नवगीत '60 में 'रश्मि' नामक पत्रिका में (त्रिवेणीगंज, सहर्षा, बिहार) छपा था। उस समय न तो मुझको नवगीत के बारे में पता था और न मैं किसी नवगीतकार को जानती थी। इसलिये सशक्त नवगीतकार सत्यनारायण जी के इस कथन से मैं सहमत होती हूँ कि 'गीत के फलक पर शान्ति सुमन का आविर्भाव एक घटना है।' और वे मानते हैं कि 'शान्ति सुमन की सृजनधर्मिता ने पैंतीस-चालीस वर्षों की यात्रा में गीत के धरातल पर अपना होना प्रमाणित किया है।' कुछ ऐसे कथन भी हैं जिनसे मेरे गीतों को बल मिलता है। डॉ० अरविन्द कुमार कहते हैं - 'इस प्रेम. तथा संबंध की व्याख्या में शान्ति सुमन इतनी सहज हैं जैसे वे घर में बैठकर बतिया रही हों।' डॉ० सुरेश गौतम लिखते हैं - 'शान्ति सुमन का नाम लिये बिना नवगीत का इतिहास अधूरा और अपंग होगा।' डॉ० रेवती रमण कहते हैं - 'शान्ति सुमन राग और रूप ही लिखती रहीं, विराग और अरूप ने कभी उन्हें आकर्षित नहीं किया तो उसके पीछे उनकी गतिशील यथार्थ की समझ और विकासशील वैज्ञानिक अंतर्दृष्टि है।' उमाकांत मालवीय ने तो मुझको 'नवगीत की एकमात्र कवयित्री' कहा।

दूसरी ओर डॉ० मैनेजर पांडेय ने कहा - 'शान्ति सुमन गीत की सीमा और शक्ति जानती हैं। जो रचनाकार अपनी विधा की सीमा नहीं जानता वह उसकी शक्ति को भी नहीं पहचान पाता।' मदन कश्यप ने दुर्लभ गीतकार मानते हुए लिखा - 'उनके गीतों से होकर 'मौसमी फूलों की सुगंध से भरी हवायें' भी गुजरती हैं और

'छिड़ी हुई दुनिया में भूख की लड़ाई' की अनुगूँज भी मिलती है।' कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह ने माना कि '...आम रवैया में बहते हुए कभी उन्होंने किसी तर्ज और/या धुन पर कोई रचना खड़ी करने की कोशिश नहीं की।' डॉ० विजेन्द्र नारायण सिंह ने कहा – 'हिन्दी के जनवादी गीतों के बड़े हस्ताक्षरों में एक हैं शान्ति सुमन।' डॉ० शिवकुमार मिश्र मानते हैं कि जनधर्मिता और कविताधर्मिता का एकात्म हैं शान्ति सुमन के गीत, जो कविता को उसके वास्तविक आश्रय में जन-चरित्री बनाते हैं।' और नचिकेता तो लिखते हैं कि 'हिन्दी जनगीत रचना के क्षेत्र में शान्ति सुमन, शायद पहला स्त्री गीतकार हैं, जिनकी रचनायें (गीत) संघर्षशील जन-संघर्षों में जुझारू मेहनतकश अवाम के द्वारा गाये गये हैं।'

इनके अतिरिक्त अनेकानेक विद्वान समीक्षक-आलोचक और पाठक हैं जिन्होंने मेरे नवगीत को ही अपनी स्वीकृति दी है और दूसरे वर्ग के लोग मेरे गीतों को जनवादी गीत ही मानते हैं। इन सारे अभिमतों और विचारों में दो विचारों को अलग से उद्धृत करना चाहती हूँ जिनमें मेरे गीतों के लिये बीच की बात कही गई है और इनमें मेरे गीतों की संगति और उसकी स्थिति साफ होती है। पहला विचार महेश्वर का है जिसमें वे कहते हैं 'शान्ति सुमन के पास मध्यवर्गीय लोगों की दैनिक तकलीफों के बोध को मानवीय संवेदना का अंग बना देनेवाला गीत-तत्त्व है। जगह-जगह इस मजबूत संभावना के सबूत हैं कि यह गीत-तत्त्व मिट्टी और मशीन और उन पर काम करनेवाले मेहनतकश अवाम की शक्ति और मुक्तिकामी जद्दोजहद से एकरूप हो सकता है।' दूसरा विचार डॉ० रविभूषण का है जिसमें वे कहते हैं – 'हिन्दी के जिन नये गीतकारों ने समय के अनुसार अपनी गीत-रचना की जमीन बदली, उनमें शान्ति सुमन प्रमुख हैं। उन्होंने जनवादी गीतों की रचना की। वे एक साथ नवगीतकार और जनवादी गीतकार के रूप में लोकप्रिय हैं।' विस्तार भय से इस प्रसंग को यहीं विराम देती हूँ और यह पाठकों, समीक्षकों और आलोचकों पर छोड़ती हूँ कि वे मेरे गीतों के विषय में क्या विचार रखते हैं।

मेरा गीत संग्रह 'धूप रंगे दिन' 2007 में प्रकशित हुआ। उसके बाद मेरी मुक्त छंद की कविताओं का संगह 'सूखती नहीं वह नदी' 2009 में आया। 2009 में ही मेरे गीतों पर विभिन्न विद्वान आलोचकों के आलेखों का संग्रह 'शान्ति सुमन की गीत-रचना और दृष्टि' नाम

से प्रकाशित हुआ। 2010 में मेरे प्रथम नवगीत संग्रह 'ओ प्रतीक्षित'- 1970 और दूसरा नवगीत संग्रह 'परछाई टूटती' - 1978 का पुनर्मुद्रण हुआ। इसके बाद मुजफ्फरपुर-जमशेदपुर के आवास-प्रवास में मेरा गीत-संग्रह प्रकाशित नहीं हो सका। अब उसका प्रकाशन **'नागकेसर हवा'** के नाम से हो रहा है। 1978 में प्रकाशित मेरे नवगीत-संग्रह 'परछाई टूटती' का पहला गीत है **'नागकेसर हवा'**। इस फूल की सुगंध कुछ इस तरह मेरी साँसों में समा गई थी कि उसके बारे में बहुत कुछ कह नहीं पाई थी। आज उसी 'सुगंध' को महसूस करते हुए मैं अपने नये गीत-संग्रह को वह नाम दे रही हूँ। नागकेसर से मिलती हवा जहाँ तक जाती है उसके विस्तार में वैयक्तिक-सामाजिक, आर्थिक-राजनीतिक सारे संस्पर्श प्रसंग बुनते हैं।

कुछ अंतरंग बातें भी - मेरी पौत्री शालीना वर्मा जो हम सबके लिए आंकी है - उसने अभी बी० ई० की पढ़ाई पूरी की है और वह अगली मेधा-संघर्ष-यात्रा के लिए तैयार हो रही है। मैं उसकी इसी अगली जीवन-यात्रा के लिये शुभकामना में अपना यह नया गीत-संग्रह **'नागकेसर हवा'** उसके नाम करती हूँ।

मेरा घर-परिवार मेरा सहयात्री है। इसमें श्री जागेश्वर लाल दास के साथ अरविन्द - डॉ० विशाखा, डॉ० चेतना - स्मृतिशेष सुशान्त, शालीना, ईशान, अपूर्व, श्रेयसी शामिल हैं। सबके स्नेह हैं - खुशी, जिद और गुस्से भी। मेरा घर-परिवार मुझको भीतर से भरा रखता है। कहीं कोई अकेलापन नहीं दीखता। मेरे पिता श्री भवनन्दन लाल दास जो अब 'कुँवर बाबा' के नाम से एक संत पुरुष हैं, अपने ९९वें वर्ष में चल रहे हैं। मैं उनको प्रणाम कर यह गीत-संग्रह **'नागकेसर हवा'** अपने समस्त सम्मान्य और प्रियजन को अजस्र आशाकांक्षाओं के साथ सौंपती हूँ।

'नागकेसर हवा' के आवरण के अंतर्पृष्ठ पर सशक्त और समर्थ गीतकार भारतभूषण, डॉ० मधुसूदन साहा एवं डॉ० विष्णु विराट की टिप्पणियों के लिये उनके स्नेहाभार स्वीकार करती हूँ।

दिनांक : बुद्ध पूर्णिमा, 2011

अनुक्रम

क्रम	शीर्षक	पृष्ठ
1.	घर यह घर की तरह	15
2.	गमके हैं कनेर	16
3.	रोये से कचनार	17
4.	थका नहीं सपना	18
5.	बहती हुई नदी	19
6.	धूप में पंख	20
7.	हरे-नील पोखर	21
8.	गीत फसल का	22
9.	कागज पर पानी	23
10.	नागकेसर हवा	24
11.	अपनी सगी बहन	25
12.	खुले खेत की हवा	27
13.	उड़े से दिन	28
14.	सुखा रही केश	29
15.	हरसिंगार की आँखें	30
16.	आई पुरवा	31
17.	रंग सुबह के	32
18.	पानी होते दिन	33
19.	तितलियों की पाँख	34
20.	फागुन उतरा	35
21.	धानी-धानी धूप	36
22.	धूप के कपड़े पहन	37
23.	जाग रही हवा	38
24.	नदी पार करती	39

अनुक्रम

क्रम	शीर्षक	पृष्ठ
25.	उफनाई यमुना	40
26.	पहली कोंपल	41
27.	आँखों से हँसती	42
28.	साखी कबीर की	43
29.	पँखुरी रही उदास	44
30.	साँसें गंध भरी	45
31.	दिवस रंग-भीना	46
32.	पिता का घर	47
33.	सपने कोमल	48
34.	माँदर पर थाप	49
35.	किरन की रस्सियाँ	50
36.	रेशम के फूल	51
37.	खेत लगे पाहुन	52
38.	ओस भरी दूब	53
39.	खुशी रँगी आँखें	54
40.	भरे जेठ में	55
41.	हँसी का पानी	56
42.	छोटा एक प्यार	58
43.	खुशबू और हवा	59
44.	सुनो शालीना	60
45.	अनहद सुख	61
46.	कोसी महरानी	62
47.	स्वप्नवाले बीज	63
48.	बादल की हँसी	64

अनुक्रम

क्रम	शीर्षक	पृष्ठ
49.	हवा सुरीली	65
50.	छोटे-छोटे दुख	66
51.	ये दिन भले	67
52.	बिन बादल के	68
53.	फूलों के कालीन	69
54.	श्रेयसी तुम हो	70
55.	खिड़की की जाली	71
56.	जेठ की दुपहर	72
57.	नदी जगी	73
58.	पहला नेह	74
59.	मन के सारे छन्द	75
60.	बाँध लें हवा को	76
61.	मकर चाँदनी	77
62.	सुरभि नहाई हवा	78
63.	पहली उड़ान में	79
64.	उठा कोई धुन	80
65.	धार-धार हम	81
66.	आँख भींगी नदी	82
67.	ईंट जोड़ते	83
68.	हँसती धूप	84
69.	आँख नदी की	85
70.	छोटी-छोटी खुशियाँ	86
71.	वह हरा दिन	87
72.	पोखर का मन	88

अनुक्रम

क्रम	शीर्षक	पृष्ठ
73.	चिड़िया की आँखों में	89
74.	मूरत गढ़ी हुई	90
75.	दिनों पर सुख	91
76.	पुलकवाली नींद	92
77.	वर्षा में धूप	93
78.	आज का दिन	94
79.	अँकुराते सपने	96
80.	किताबें धूलों की	97
81.	कैसे कहते लोग	98
82.	आँक रही चिड़िया	99
83.	पानी पर पानी	100
84.	खुशी के आँसू	101
85.	इसी शहर में	102
86.	बच्चा की आँखें	103

◆ ◆ ◆

घर यह घर की तरह

सपनों ने साँसें लीं
घर यह घर की तरह हुआ
हीरे-मानिक से क्या कम हैं
तेरे लिये दुआ

पीले गुंथे कनेर संग
लहरे हों केश तुम्हारे
माथे की बिन्दी में जगमग
दिपते कई सितारे
तेरे आते ही तो घर यह
परव-तिहार हुआ

नहीं जान पाओगी अपने
होने के तुम माने
कितने-कितने सपनों में तुम
रची रही सिरहाने
केवल दीवारें थीं घर में
अब संसार हुआ

आँखें ही दीखी थीं केवल
और नहीं कुछ भी
कोमलता का वह अभिलेख
कहाँ था कैसा भी
आकर इस छोटे घर को
पूरा परिवार किया

■

5/3/87

गमके हैं कनेर

केले के पात हिले हैं
गमके हैं ढेर से कनेर

वंशी समेट चले
साँझ हुई चरवाहे
गूँज बँधी रही मन की डोर

आँखों के सिलसिले
हवा रुकना न चाहे
अड़हुलों के पातों में शोर

मछुवों के जाल हिले हैं
कंठों में उगते हैं टेर

आँखों के जल मिले
नदी को मिली राहें
भरी रात मुस्काता है भोर

बन्द खिड़कियाँ खुले
हवायें लें फैसले
ताल भरते बागों के मोर

नावों के पाल हिले हैं
पौ फटने में होगी देर।

■

11/11/09

रोये से कचनार

खुशबू चली हवा के घर से
रोये से कचनार
जैसे बढ़ते पाँव विदा के
मन के फाँक हजार

आशीषों में हाथ उठे हैं
अड़हुल के जूही के
खेतों के मेड़ों पर बादल
आते हैं फूही के

दोनों पाँव महावर भर के
चलती दो पग चार
महफा के झालर में उड़ते
रंग नहाये द्वार

टहनी की आँखें भर आईं
लहरों ने मुँह पोछे
हरियाली के नये बाग में
मन ही बन अंगोछे

भीतर ही भीतर कुछ दरके
नेह नयन अँकवार
मन से मन की बात हुई है
रंगे खत में प्यार।

■

11/11/09

थका नहीं सपना

नहीं थकी है आँख
थका है नहीं आँख का सपना

शब्दों का क्या चुक जायेंगे
भाषा को चुप कर जायेंगे
कच्ची गेहूँ की बाली की
खुशबू में घर कर जायेंगे

नहीं रुकी है साँस
रुका है नहीं नींद का जगना

चूड़ी की कलाई होगी
धुन में धुन समायी होगी
खिली फूल सी बदली दिन की
आँखों से मुस्काई होगी

नहीं बुझी है आग
बुझा है नहीं तटों का तपना

अभी उगती है खेतों में
फसल सी पलती सेंतों में
कली सहसा जग मरुथल में
छिपी नहीं नदी रेतों में

नहीं थमी है आस
थमा है नहीं अधर का हँसना।

■

8/11/09

बहती हुई नदी

अपना दुख कहती रहती है
बहती हुई नदी

सच कहने की आदत से
वह बाज नहीं आती
खिलते फूलों सी आँखें
बरबस रस बरसातीं

रितु बदली लिखती रहती है
मन में चतुष्पदी

भरने लगी रेत नाचा
करती जहाँ लहरियाँ
अलग तटों की दूबों से
पानी-बीच मछलियाँ

जूही सी खिलती रहती है
आसिन की सरदी

दिन का मजमून किसी से
पढ़ा नहीं अब जाता
पहुँचा खत सही पता पर
लिया नहीं जाता

खुशियों सी पलती रहती है
आंगन की हल्दी।

■

6/11/09

धूप में पंख

लौटी नहीं समय से घर में
कोई बात नहीं

आई है तो अब धूपों में
पंख पसारेगी
कोमल मुखड़े को निहारकर
नीड़ बुहारेगी

आँखों की हर बात अधर में
कोई बात नहीं

अभी सुनेगी धमक चटकने
की इन कलियों की
मुड़-मुड़कर देखेंगी आँखें
सूनी गलियों की

खुशबू भरी रहेगी डर में
कोई बात नहीं

उसे चाहिए ऐसी हलचल
जिसमें साँस बसी
दूधभरी गेहूँ की बाली
में हो फँसी हँसी

कम्पन भरे हुए हैं पर में
कोई बात नहीं।

■

6/11/09

हरे-नील पोखर

वे मुलाकातों के दिन
बिन बात बातों के दिन
अब नहीं हैं

चाँदनी के गाँव में
फूलों के रथ पर
घूमा करता था मन
खुशबू के पथ पर

दुपहरी छाँहों के दिन
कन्धों पर बाँहों के दिन
अब नहीं हैं

मछली के नाच भरे
हरे - नील पोखर
ताल एक बजता सा
साँसों के सुख पर

मुसकाती आँखों के दिन
जुड़ी-जुड़ी पाँखों के दिन
अब नहीं है

ऐसी कुछ बुनी हुई
मन में गूँजे धुन
खुशबुएँ बरसती सी
बहुत हँसती तुहिन

मेघ के लगाव के दिन
प्रीत के उछाह के दिन
अब नहीं है।

■

15/12/09

गीत फसल का

जो खेतों में हरियाली बोते हैं
पहले गीत फसल का वे सुनते हैं

पोर-पोर में इस मिट्टी के
कैसे बसती खुशबू
कैसे हुई हवा बावरी
नाचे उसको ही छू

लहर पहनकर मछुवा खुश होते हैं
गीत धारवाले वे ही गुनते हैं

कैसे चढ़ी लतर छान पर
अपनापन करची की
रंग बदल दे पोखरों का
नरम पुरइन की बच्ची

जो पहचान पखेरू की होते हैं
वन का पहला फूल वही चुनते हैं।

काढ़ते नरम-नरम भाषा
जो जुड़ी हथेली से
जाल फेंक सुनहरा पूछे
वह कली चमेली से

तटों पर नींद मछलियों की सोते हैं
कमल ताल के गीत-सपन बुनते हैं।

■

24/12/09

कागज पर पानी

तपी दुपहरी रेत-रेत दिन
पानी कहाँ मिले
इस जलते मरुवन में बाबू
कैसे कमल खिले

नंगे पाँव चली आई है
हवा बेंत-वन की
शिकन-बुनी महुआ के माथे
चूड़ी सी चनकी

कागज पर बहता है पानी
प्यासे होंठ सिले

पढ़ा करें बच्चे किताब में
पोखर-घाट-नदी
खाली हाथ चली आई है
यह जल-हीन सदी

काँटे ही खिलते हैं अब तो
घर भी लगे किले

कहाँ रही अब कौन मेनका
साधु कान बहरे
बिन नूपुर के रुनझुन सुनते
ऐसे दिन ठहरे

चाँद-सितारे, फूल-हवा के
दिखते मुख उजले।

■

12/5/11

नागकेसर हवा

साँस सी लगती हवा अपनी
नागकेसर पहन जब साँकल बजाती

घाट-पोखर-नदी लगते
इत्र के झरने
दूर के संगीत मन में
लगे घर करने

आँखें सुबह की खुले इतनी
नेह की लाली बहुत खुल खिलखिलाती

कशीदा सी कढ़ी बेलें
इन खिड़कियों में
ये धूप के मेले लगे
हैं जालियों में

हँसी छापें पैर की पहनी
लोरियों में सुर सपन की गुनगुनाती

रंगने लगी रंगों में
कथा गंधों की
दूर तक बसने लगी है
लय सुबंधों की

नेह खिले खुशी की टहनी
पास आते देख आँखें छलछलातीं।

■

12/5/11

अपनी सगी बहन

पीले कुरते पहन नाचते
आँखों में वे दिन
लगता दबे पाँव आई है
अपनी सगी बहिन

साफ हुए थे घर के परदे
माँ ने कलश भरे
तुलसी चौरा पर दादी ने
अक्षत-फूल धरे

लाखों लाख बहाने तो थे
सपने थे कमसिन
बचा लिये थे हमने सारे
खुशियों के पल छिन

जेठ मास की दोपहरी हो
भादों की रातें
हमने सुख-दुख बाँटे कितने
मीठी सौगातें

आती याद हँसी में डूबी
बगिया की मालिन
लहर उठाती नदी आज तक
दीखी नहीं मलिन

हिला रही जड़ से पेड़ों को
वैसी हवा बही
पथ ही अलग बनाकर अपना
थिरकी जवा हुई

गड़ने लगती अभी बहुत वे
नीली याद गझिन
फूलों को तितलियाँ बनाना
होगा नहीं कठिन।

■

30/12/09

खुले खेत की हवा

खुले खेत की हवा सरीखे
मन दौड़-भागे
फैला दी चिड़िया ने बाँहें
मेड़ों के आगे

जब-तब निकल पड़ी उड़ान पर
संग फूल को ले
राह खुशबुओं ने दिखलाई
रंग धूप को दे

कुमकुम बिखरा है परबत पर
भरी मांग लागे

बहुत नाचने लगती है वह
रोम-रोम खिलते
कई पेड़ हों हरसिंगार के
फूलों से भरते

पानी-रेत, शंख-सीपी हैं
सब भीतर जागे

ऐसा घर कोई बस्ती में
कबसे मिला नहीं
मिटती जहाँ थकान पैर की
कोंपल नाच रही

फटी हुई चूनर को उसने
फिर से कल तागे।

■

31/12/09

उड़े से दिन

नदी चुप है, धार चुप है
और चुप लहरें
इन उड़े से दिनों में हम
कहाँ जा ठहरे

पाँव सौ-सौ चल पड़े हैं
अँधेरों के दल
देखना है कठिन कैसे
पल रहे हैं छल
सुरंगों से भरी राहें
पाँव पर पहरे

जली है तो आग घर में
ताप कितना कम
अँधेरी इन घाटियों में
गुम हुआ मौसम
साफ तो कुछ नहीं दीखे
अतल जल गहरे

फसल के तन धूप छूती
चल रही पैदल
और साँसें थक रही हैं
थम गई हलचल
नाव में भरता हुआ जल
आँख-मन झहरे।

■

14/11/09

सुखा रही केश

कूक गई कोयल
पर रथ है रूका हुआ
फागुन का

आते-जाते कभी हुई
पुरवा की कहा-सुनी
मौसम ने मारे ताने
है तब से अनकहनी

सुखा रही है
केश धूप में धागा बाँध
सगुन का

कैसा है आते-जाते
वह देती उलाहने
बेमौके वह झनकाती
रहती अपने गहने

होना था जो
आज वही होगा पुरवा
के मन का

दुहरती हुई हँसियाँ हैं
अपनी जमा कमाई
भरी तिजोरी धूपों की
पूँजी यह अगुआई

सुख-सुहाग की
तारीखों में इन्तजार
पाहुन का।

■

15/11/09

हरसिंगार की आँखें

फूलों के गाँव में आकर
भटक गई फिर हवा
लाल ऊन बुनती रोशनियाँ
लजाती शीश नवा

धरती गाती गीज सजा
अपने माथे पर कुमकुम
हरसिंगार की आँख में
रंगीन उतरता मौसम
नचा आँख निमंत्रण देती
लाल होंठ से जवा

पत्तों के कागज पर लगी
हुई नयी हल्दी की छाप
जल पर सूरज की लाली
फैलती है बनकर भाप
बेचैन सी बया भागती
दिन तपता सा लगा

बाली से लदी गमकती
ओसों को ओढ़ती फसल
सपनों का अहसास जगा
यादों में वह लाल कमल
कम होने का नाम तो ले
मौसम का रुतवा।

■

15/11/09

आई पुरवा

उमस बाँटती आई पुरवा
रितु को हुआ पता

फूलों की पंखुरियों पर
आलेख लिखे धूलों के
टहनी-टहनी टकराई
जैसे कम्पन कूलों के

होते सुबह संवदिया आया
सबको गया बता

बहा वह पसीना जैसा
बहता पत्थर चुनने में
फसल की अंगड़ाई है
लाभ सुगन के गुनने में

बीच-बीच में हवा झिहरती
लगता माफ खता

पेड़ों पर पतझड़ का कुछ
अहसास नहीं वह देता
खुशकिस्मत जो इस मौसम में
मिलकर नदी-नाव सेता

मँहगाई कद छोटा करती
मिहनत रही बता।

■

20/11/09

रंग सुबह के

खर-पतवार अभी झुलसे हैं
ऐसे ही तेवर कल से हैं
नहीं देखने में आते हैं
रंग सुबह के

गयी-गयी आई दोपहरी
अभी तलक वह वैसी ठहरी
माना, जाएगी भी तो कब
किसको कहके

उलाहने उजड़े बागों के
काले धुएँ बने झागों के
धीरे पसरेंगे अपने दुख
मन के सहके

मौसम चुप नहीं पिंजरे में
आगों को भर हवा घड़े में
सृजन गीत का होगा ऐसे
जब हम दहके।

■

21/11/09

पानी होते दिन

पीले होने लगे पात पतझड़ के
दीखती है अब नहीं कोंपल

वर्षों की इच्छा ने उत्सव के रंग भरे
गंधों ने अल्पना रची
धूप के मांदर बजे, सुरीली हवा ने
छींट दी हैं खुशियाँ बची

पानी-पानी होते दिन बादर के
मोती से लगते उजले पल

उजलाये अनुबंध मकर चांदनियों के
हंस ये नीली नदी में
मनों के मनोरथ पहने उतरती हवा
खुशी दूब-धान-हल्दी में

टहनियों ने पंख पहने पातों के
कुमकुम से रंगे हुए मरुथल

कोई न चिट्ठी-पत्री नहीं कोई समाद
सब कुछ राम के भरोसे
आँखों के मोती लुटा रही चिड़ियायें
चान मनोरथ हों जैसे

कमल-पंखुरी पर नाम लिख हवा का
आसमान में बसता बादल

■

23/1/10

तितलियों की पाँख

देखती हूँ आजकल फिर
आँख में कुछ मछलियों की

बोझ भारी से दबा मन
चल रही है साँस रोपे
आँख की पतुली बसा जो
सपन-सुख को बहुत टोके

धूप के मेले लगे हैं
पाँख उगती तितलियों की

ताल के तट पर खड़ी है
हँसी दाबे एक चिड़िया
उछलते सपनों हवा में
प्यार, कुमकुम और दरिया

धुआँ गाढ़ा भी रहे तो
राह उजली बिजलियों की

मौसमों का रुख हवा को
देखकर पहचान लेना
इस तरह इस जिन्दगी से
धूल-झंझा टाल देना

इन किराये के घरों में
नींद दुखती पसलियों की।

■

26/1/10

फागुन उतरा

अलसायी हैं आँखें
लगता फागुन उतरा है
आँखों में, गालों पर
ताजा कुमकुम बिखरा है

गेंदा के फूलों की खुशबू
भरी हुई पुरवाई
सुर लय की कोंपल जो फूटी
पहचानी धुन आई

मन के ही साँकल पर
कोई जादू ठहरा है

हिलते ये पात करोटन के
बतियाती खूब बया
पलकें पहन हँसी का चूनर
जलता रूप का दिया

मीठी भाषा जैसे
पूरा वसन्त लहरा है

अँजुरी में रूमाल प्यार के
बुने हुए सिरहाने
आँखें कहती-लिखती आँखें
वे ही यह सब जाने

'परण' और 'गत' का ही
सुख जीवन में गहरा है।

■

16/2/10

धानी-धानी धूप

गम-गम करे कनेर, रात
चाँदनी ओढ़कर आई

जलतरंग बजते हैं
आती लहरों पर लहरें,
मछली की आँखों में
नाची गीतों की सतरें

इन लाल झालरों वाली
है चूनर में पुरवाई

लगता जागेगी कल
तो बहुत देर से चिड़िया
गालों की लाली पर
हँसेगा रंग का पुड़िया

धानी-धानी धूप और
वह खड़ी-खड़ी मुसकाई

राह बदलकर घर में
आईं नई-नई किरनें
नींदों की घाटी में
झरते सपनों के झरने

मुट्ठी भर नीला आकाश
उड़ान में चिड़िया लाई।

■

6/3/10

धूप के कपड़े पहन

धूप के कपड़े पहनकर दिन
इस तरह आया हमारे पास
तुम लगी, हाँ तुम लगी जैसे
वही फागुन का भरा आकाश

पाँव पैदल आ गया
चंदा जमीं पर
रीझते ही हम रहे
उसकी नमी पर

इन दिन-दुपहरी हवाओं में
खोल मन को खिलखिलाता हास

तुम नहीं थी नहीं था
अहसास इस रितु का
सुबह से हाल यह हो
गया इस जी का

अब धूल में भी खुशबुओं की
जिन्दगी का हो रहा आभास

सुख जो न जिया गया
इतने दिनों से
बचाकर रखना इसे
चुभते पिनों से

हुआ होता यही कुछ पहले
गंध को भी रंग मिलते काश!

■

22/6/10

जाग रही हवा

धूप सुबह की मुस्कानों सी आई है अंगना
पर मन के भीतर जैसे उफनाई है यमुना

मिनटों में छत पर तो कभी
सहन पर भाग रही
खुशबू की चादर बुनती
सहज ही जाग रही
आँख में पुतली का प्यार पहन लेता कंगना

जैसे उलझे जाते मन के
सारे ताने-बाने
कथा दुहरती पिछले क्षण की
बात नहीं माने
हौले लगता है झरने तभी हँसी का झरना

जाग रही है हवा मगर
जगने का नाम नहीं
कितने बरस हुए पहुँची है
अपने गाम नहीं
फुनगी पर बूँदों का कलरव आँख मूँद सुनना

घर में जलते दिये रोशनी
बाहर झाँक रही
गर्म साँस बच्चों की
अपने तन-मन आँक रही
दुख का उत्सव ही देखेगा अब दुख का कमना।

■

1/10/10

नदी पार करती

इतनी हलचल दिन के भीतर
कब से यही लखे
नदी पार करती लड़की सी
वह बेचैन दिखे

वैसे है मालूम कि झंझावतों
में ही इतने
उगते रहते बड़े हौसले लेकर
नींदों में सपने

रेतों पर भी होती छापें
जब-जब पाँव रखे

समय रहे चुप कितना वह मौसम
भी और दिशाएँ
संकेतों से सुलगाती हैं हारी
सी थकी हवायें

बंजर भी कोरे-बोने से
हरियर स्वाद चखे

ऐसा कोई नहीं कुहासा
चीर न दे जिसको
वह एक प्यार की हँसी और खुशबू
छू दे उसको

हरी दूबों पर नन्हीं ओसों
का अहसास लिखे।

■

2/10/10

उफनाई यमुना

इस सुबह-सुबह से ही मौसम
लगता इतना बेजार
उफनाई यमुना में जैसे
हैं बहते खर-पतवार

बहने को आवेग धार का
पुल के ऊपर से
पंख सहेज लिये चिड़ियों ने
नीड़ों में डर से

कोशी की धारा दुहरी है
लगे दिल्ली हुई बिहार

जड़ से फुनगी तक रातों भर
पेड़ रहे जागे
पत्तों के रेशे के सपने
भी ऐसे भागे

वर्षा की बौछारें पर मन में
है जलती अगन हजार

जलकुंभी में बहते जाते
लिपटे अंगोछे
पानी-पानी एक नहायें
किससे मुँह पोछें

कोंपल मन के बच्चे मांगते
हैं आतिश और अनार।

■

2/10/10

पहली कोंपल

मुस्कानों की धूप पहनकर
आई सुबह हवा
जल्दी-जल्दी रंगने बैठी
अपने ओंठ जवा

महमह करे देहरी घर की
खिड़की बुनती जाली
कोंपल पहली इस अड़हुल की
फूटी लेकर लाली

अभी उतरने वाली परबत
से है लाल शुआ

सपना एक सलोना कब से
मन में दौड़े-भागे
एक बया फुनगी पर बैठी
है सबसे आगे

कहती कथा जेठ की धरती
कैसे बनी तवा

पोखर के पानी दिखते हैं
रंगे लाल कुई के
झालर सिलने में भी बनते
गहरे दाग सुई के

एक खुशी पाकर निकलेगी
खुशियाँ कई सवा।

■

21/10/10

आँखों से हँसती

कंचा खेल रही है लड़की
आँखों से हँसती
खाली हाथ अब तक है रही
अधूरी है मस्ती

रह-रह आसमान को देखे
रह-रह बादल को
घर पर अपनी नजर टिकाये
उस बीते कल को

सुहाती अभी हाट की चीजें
हैं इसको सस्ती

घर में जाकर चिड़िया जैसी
चुग लेगी दाना
कुछ समझ है अभी नहीं उसको
क्या खोना-पाना

सबसे बड़ा खिलौना उसका
कागजों की कश्ती

यहाँ-वहाँ रखती पाँवों को
गिन खरगोशों सी
जैसे धूप छुए फसलों को
वैसे जोशों सी

आगे-पीछे घूमती बच्चों
की पूरी बस्ती।

■

4/10/10

साखी कबीर की

हवा में घुली सुगंध खुली
झोली अबीर की
कहीं बज रही खंजरी में
साखी कबीर की

चिड़िया की छोटी बेटी ने
खोली अपनी नन्हीं आँखें
खुश है बहुत मिली है उसको
दो-दो रंग-बिरंग पाँखें

पढ़ते हुए अजान आँखें
भारी शबीर की

सुबह नहीं लगती है यह कुछ
और हरी सुबह के जैसी
बिना खुले साँकल ही घर में
बजती कथा राग इमन की

पहन घाटी ने हरियाली
आँख नम चीर की

फूल से गंध लेकर किसलय
से गीत-लय झीनी लाली
खेतों की फसलों से लेकर
मूंग की दूध भरी बाली

रितु को प्यार दिया पाँती ने
मीरा-अमीर की।

■

7/10/10

पँखुरी रही उदास

दिवस आज का कैसे आया
कैसे चला गया

पंखुरी रही उदास और
खुशबू भी बन्द रही
मरुथलों में गीतों की लय -
तानें निष्पन्द रहीं

छाये रहे धुंध में सूरज
वापस चला गया

सूने से लगे शब्द और
अहसास चुका लगता
जिद के बिन बीतता बचपन
नेह भी रुका लगता

नदी-नाल में पानी जैसे
आया चला गया

मौसमों ने गिरवी रख ली
पेड़ों की हरियाली
उजलायी आशा हँसी की
लेकर हिलती डाली

सही उड़ान के पहले ही
सपना वह चला गया।

■

9/10/10

साँसें गंध भरी

जब-जब खुलीं दिशायें मन की
झील हुईं आँखें इस वन की

गहरे होने लगे हँसी से रंग दिवस के
बाँधे बँधते नहीं वेग ये किनके वश के

हवा पहन हरियाली दिन की
साँसें गंध भरी चन्दन की

दरवाजें, छतें, घरों की साँकलें, देहरी
अगहन वाली धूप सुरमयी धुन में लहरी

तन में हलचल घुली थकन की
फिर से हरी चूड़ियाँ खनकीं

भरे माघ में फड़-फड़ उड़े नीड़ में सपने
उस उड़ान वाली सुबह के पराग में सने

आँख हुई रतनार सपन की
खिड़की खुलीअजाने छन की।

■

12/10/10

दिवस रंग-भीना

गुनगुनाती बस्तियाँ हैं प्यार की धुन
आज का यह दिवस
कितना रंग भीना

लौट आये हैं पखेरू साँझ के पहले
दूध भरती बालियों को देख मन बहले

पंख पर तितलियों के लेट कर फागुन
भर दिया हथेली में
हँसी का सोना

अभी पर्व सा कोई मना है घोंसलों में
नयी सुरमयी दुपहर दिखती हौसलों में

इन गझिन बस्तियों मे गीत बाँटे घन
कुमकुमों में लिख गया
है प्यार झीना

खिंचे हुए ओठों पर इन्द्रधनुष सुरों के
पीले आँचल छाँहों में फिर तनिक सरके

साँझ घिरते दीखता दलानों का मन
फूस की छत पर बया
का गिरा मीना।

■

12/10/10

पिता का घर

सुबह-सुबह बंद आँखें
जब रखो हथेली पर
दीखेगा तुमको वही पिता
की पीठ-सरीखा घर

जिस खिड़की से दिखते
नीले मेघ, पेड़ की पाँतें
गपशप करती हवा और
भींगी-भींगी बरसातें

हाथ वही आशीष भरा
होगा तेरे सिर पर

पतली सड़कों से हो जो
कमरे तक पहुँचा करती
हरियर दूब की गंध वहीं
द्वारों का जेवर बनती

कशीदे जैसे भींगे
कपड़े रस्सी के ऊपर

बहुत बड़ा अपनापा
इस तकिया और किताबों में
मग से मिला तौलिया
गुम है आपस की बातों में

नील छाप वाला परदा
न्योते सुख को दिन भर।

■

7/11/10

सपने कोमल

जीवन की आपाधापी में
बचे रहे कुछ पल
खुशी रंगे हुए ले आये
हैं सपने कोमल

आसमान का रंग उतर
धरती की आँखों में
आशीषों का सूत बाँध
चिड़िया की पाँखों में
लगता नदी-झील-सागर में
तैर गई हलचल

कहीं छूट गये थे सब कुछ
बहुत जुगाने में
भींग रही पलकों तक आई
हँसी बचाने में
मुँह के बोल छीन लेते हैं
आँखों के काजल

गमक उठी है जूही चमकी
चाँदी की अंगूठी
दुख-थकान की सारी बातें
लगती हैं अब झूठी
सूरज-चाँद बसे हों जिसमें
घर है रंगमहल।

■

7/11/10

माँदर पर थाप

चाँदनी पहनती रात
रंग निखरे अड़हुल के
माँदर पर पड़ती थाप
उड़े अबीर सरहुल के

हँसी दबाकर बैठ गई है
अपना जूड़ा खोले
हवा धूप का बहनापा है
कैसे मुँह से बोले
याद आते हैं अपने
घर बहुत अब बाबुल के

मन होता गिरह एक बाँधे
अब इस तेज हवा में
चिड़िया कब चुप रहने वाली
सिहरन है तलवा में
खुशियाँ आज जब आईं
आईं तो बहुत खुल के

हैं शंख सरीखे उलट गये
ये फूल कलाई के
यह एक हँसी नमकीन मिले
धन कठिन कमाई के
रतन एक अनमोल भाल पर
रह-रह कर पुलके।

■

15/10/10

किरन की रस्सियाँ

भोर होते ही पखेरू
गुनगुनाये

गूँजती दालान पर है
हलचलों सी
घंटियाँ बज रही बैलों
के गले की
खेत पहने बालियों को
मुस्कुराये

सुहागिन सी नयी लगती
फुनगियाँ हैं
बाँधती जल को किरन
की रस्सियाँ हैं
पत्ते ईखों के हवा में
सरसराये

घरों की छत, द्वार खुलते
साँकलों में
रंग गहरे से आँख के
भर पलों में
दिन बैगनी कई सारे
पास आये।

■

14 / 10 / 10

रेशम के फूल

उमर भले कुछ हो
बातों से लगती नयी बुआ

आते साफ करेगी पहले
दीवारो के झरते चूने
घर-दालान बुहारे, देगी नहीं
किसी को कुछ भी छूने
बोली तो ऐसी
जैसे टपकी टप-टप महुआ

वैसे मन-मिजाज से लगती
है वह बहुत बड़ी रपटीली
कोई बात पकड़ लेती तो
बचपन छोड़े नहीं हठीली
खोंइछ भर सनेह
पितरों से लाती मांग दुआ

धूप से मिल क्रोशिया काढ़े
सुन्दर फूल बुने रेशम के
सावन-भादो गीत चुनेगी
खुशबू घर में केसर गमके
आँखों में भरती
है गंगा आँचल में पछुवा।

■

16 / 10 / 10

खेत लगे पाहुन

सुबहें रचतीं कुमकुम संझा में मकरन्द झरे
आते-जाते पुरवा भी कैसा मनुहार करे

जीवन की आपाधापी में
बचा लिये कुछ पल
कस्तूरी सा गमके मन में
रह-रह कर कोमल
माथे पर चुम्बन का टीका पुलक अमंद भरे

गदराया यौवन सरसों का
खेत लगे पाहुन
मगन कुलाँचें भरते हैं दिन
के सुकुमार हिरन
चूड़ी पहन रही आँखों की खुशी बहुत लहरे

दुपहर पहने रंग शंख का
हँसता है पाटल
पोखर के पुरइन पर बूँदों
का गहना झलमल
और कुहासा परबत के पीछे का शोर करे।

■

27/10/10

ओस भरी दूब

टहनी को चिन्ता है जड़ की
जड़ को फूलों की
इसी तरह से गुजर-बसर चलता है मौसम में

आयेगी चिड़िया पहले
पातों से बतियाएगी
धूप-हवा का हाल-चाल
ले धीरे उड़ जाएगी
ओस भरी दूब पर सरकी
छाया धूपों की
यही प्यार नहलाता सबको खुशी और गम में

शनिगांधार बजा लहरी
जड़ से हरियाती लहरें
उजली धारों में लिखती
मन की वे कोमल सतरें
नहीं सूखी नदी आज भी
गाँव-सिवाने की
फसलों के सुर में बजती हैं तानें सरगम में

सड़क लगे हाथ उठाये
घर की ये नई कतारें
खिड़की-दरवाजे से हो
पहुँची हैं जहाँ बहारें
भरी लगती उजली खुशियाँ
सिलहारिन आँखों
अपने भीतर कई हाथ उगे जिनके श्रम में।

■

14/10/08

खुशी रँगी आँखें

रहकर बाहर तीन महीने
लौटे हवा, फूल के दोने
गंध देह धरकर आई है
गूँजे सुर चिड़िया के झीने

रोशनदानों और खिड़कियों
पर बनते धूपों के जाले

सुख ने सुख को छूकर देखा
लालिम नील खुशी की रेखा
घर-बाजार लोग करते हैं
एक-एक सपने का लेखा

माँ की खुशी रँगी आँखों में
पलते शब्द हौसले वाले

बौर लगी डालियाँ आम की
आस जिन्दगी सुबह-शाम की
शब्द-शब्द माँ की चिट्ठी के
वाँच रहे हैं खबर गाम की

बड़की काकी के उलाहने
स्वाद कई जिलेबियों वाले

दीखे ईखों के खेतों में
पत्ते जैसे जल-रेतों में
हँसी आँख की खुल-खुल पड़ती
जैसे खुलती जिद बेतों में

याद में पिता, पिता याद में
जैसे शिव के संग शिवाले।

■

15/9/08

भरे जेठ में

पेड़ ने फूलों को देखा चिड़िया हँसती है
अपनापन में डूबी लगती सारी बस्ती है

नीड़ों में हिलते हैं डैने
फँसते हुए चोंच में तिनके
धूपों से बतियाती भी है
गिनती है बातों के मनके

जल पर तैर रही हिलती यादों की किश्ती है
फिर रंग में रंग जाने के लिए तरसती है

अपने ही दुख जब दिखते थे
बड़े-बड़े लगते वे कितने
गिरे हुए पीले पत्तों पर
अपनी मुहर लगायी जिसने

ऊसर हुए खेत पर रितु की आँख बरसती है
खुशियों की ताबीज बँधी है, बाँहें कसती हैं

आनेवाले मौसम देंगे
सपने नयी-नयी कोंपल के
बादल-हवा-धूप सब मिलकर
आयेंगे पैदल ही चल के

भरे जेठ में लगती है यह छाँह बड़ी सस्ती है
जितनी तपती रेत, खुशी की मछली फँसती है।

■

24/9/08

हँसी का पानी

चिड़िया की पाँखों पर
बारिश का पहला पानी
यह बारिश का नहीं,
प्यार का पानी बरसा है

खोल रहे आँखोंवाले बच्चे नीड़ों में
बच-बचकर डग भरती हैं माँ भीड़ों में
उड़ती पहाड़ों से आगे लाती दाने
कई बार तो फँस जाती शहतीरों में

भींगे पत्तों के कपड़ों
में हँसी फूल की रानी
यह बारिश का नहीं
हँसी का पानी बरसा है

काले बादल बरस रहे धनखेतों में
कोमल सा कुछ रोप रहे हैं रेतों में
खींचते उजली लकीर पाँत में बगुले
छोटी खुशी बुनी जाती है बेंतों में

फुनगी-फुनगी दूबें
पहनी हैं चुनरी धानी
यह बारिश का नहीं
खुशी का पानी बरसा है

पहली प्रेम कविता जैसे कालिदास की
छपने लगी धरा पर बूँद में सुवास की
खुलती खिड़कियाँ रहें, खुले हों दरवाजे
आती रहे आहट अपने आसपास की

रितु के मनुहार जगे
सोने के नथ में चानी
यह बारिश का नहीं
राग का पानी बरसा है।

■

24/10/08

छोटा एक प्यार

कभी कहीं कुछ हो पर अपनी
टूटे नहीं सुलह
रोज हवा खुशबू से कहती
आकर इसी जगह

छोटी-छोटी बातों पर
खाती है कितनी कसमें
बहुत दिनों तक मगर नहीं
रहती है अपने वश में

ढूँढ-ढूँढ कर ले आती है
सुख की नई वजह

खिलते हैं बाड़ी में दिन
फूले गेंदा से पीले
छोटा एक प्यार हाथ से
उठा होंठ से छू ले

खुलकर आज रहेगी कब से
बाँधी हुई गिरह

कहना था कचनारों को भी
कह न सकी सोने में
हल्दी-चन्दन का उबटन भी
लगा नहीं रोने में

उतरा आँखों में अपनापन
ओस-कण की तरह।

■

12/11/10

खुशबू और हवा

सुबह-सुबह बंद आँखें जब
रखो हथेली पर

दीख ही जाएगा बेटी
वही पिता का घर

खिड़की से झाँके नील मेघ
वे सघन पेड़ की पाँतें
खुशबू और हवा की गपशप
वे हरी-हरी बरसातें

सड़क पर छोटी गिलहरियाँ
दौड़ फिरे दिनभर

बीचो बीच टँगते रस्सी पर
सूखे से गीले कपड़े
मग के पास रखा अंगोछा
आइना-कंघी के पहरे

गई नरम दूब पर चलकर
धूल किताबों पर

निकल देखना छोटी सड़कों
पर इन धूपों के मेले
लगी क्रोशिया-कढ़ी फूल के
साथ खिलीं ये बेलें

कोई कहाँ अकेलापन तुम
देखो तो खुलकर।

■

13/11/10

सुनो शालीना

कहानी उठने लगी
इस गाँव में अब नहीं जीना
सुनो, शालीना!

कटे पेड़ों से यहाँ
कटते गये बाबा
धान की फसलें पकीं
उड़ने लगे लावा

आँधियाँ चलने लगीं
बहता लहू सा अब पसीना
सुनो, शालीना!

मछलियाँ सोती नहीं
अब पोखरों में
हँसते सुबह में नहीं
ये बच्चे घरों में

धूल सी उड़ने लगी
अब जल कहाँ यह मौन पीना
सुनो, शालीना!

हाथ में माचिस लिये
खोजते तेल-रुई
वह जो कल घर आईं
हवायें कहाँ गईं

बदलने लगी लहरें
जब कौर मुँह का गया छीना
सुनो, शालीना!

■

16/11/08

अनहद सुख

यह जो चमक रहा है दिन में
अपना ही घर है

छत के ऊपर कटी पतंगें
दौड़ रहे हैं बच्चे
सूखे कपड़ों को बिलगाकर
खेल रहे हैं कंचे

यह जो बेच रहा है टिन में
गुड़ औ' शक्कर है

एक-एक रोटी का टुकड़ा
एक-एक मग पानी
फिर भी रोती नहीं सुनीता
नानी की हैरानी

यह जो सोच रहा है मन में
असली फक्कड़ है

नंगे पाँव चले बतियाने
इस टोले, उस टोले
कीचड़ को ही बना आइना
उझक-उझक कर डोले

यह अनहद सुख जागा जिसमें
वह तो ईश्वर है।

■

30/11/08

कोसी महरानी

अभी गाँव मत आना

बालू उगल गई गुस्से में
यह कोसी महरानी
अँतरी दाबे तीन दिनों से
भोला तीन परानी

घटना केवल एक रात-दिन
रह-रह नीर बहाना
अभी गाँव मत आना

झौवे और पटेर दीखते
उगे हुए इतराये
इस अकाल में कौवे बैठे
घर में नजर गड़ाये

आँखों की पुतली उदास
भरती है फिर-फिर ताना
अभी गाँव मत आना

खूँटे पर की गाय सिलेबिया
छान तोड़कर भागी
बछड़े की सुध नहीं उसे है
होता है मन बागी

पता नहीं कब बड़ी फुआने
छोड़ा नदी नहाना
अभी गाँव मत आना।

■

22/7/10

स्वप्नवाले बीज

इस शहर का यह परायापन
याद आई माँ

नींद से भी उठा देती
अगर सोये पैर बिन धोये
रात के इस खेत में जैसे
स्वप्नवाले बीज बोये

सुबह में भरती नित नयापन
याद आई माँ

कम आमद घर सँभालती
रोपकर वे खुशी के विरवे
पेट आधा काटकर भी
बीज बोती है सुबह के

देख सागर का सयानापन
याद आई माँ

साँझ में जब घंटियाँ बजतीं
पता करती समय का
लौटकर आये पिता को देखती
घर पूरा लगे हल्का

दिन ये आ गये किंशुक पहन
याद आई माँ।

■

28/10/10

बादल की हँसी

बाढ़ है सिर चढ़ी संगीन सी
किनारों से लोग कटते जा रहे

बच सके बस वही
जिनमें एषणा थी
आँख में खुशबुओं
की वह अल्पना थी

नदी के साथ बादल की हँसी
पेड़-पौधे बाग सिमटे जा रहे

फुनगियाँ खाली मिलीं
उड़ती हुई चिड़िया
रात के काले अंधेरे
से डरा डिबिया

नींदों में छोटे-हरे सपने
क्रोशिया में प्यार बुनते जा रहे

खोजने से कहाँ मिलते
सुखों के पल
फूहियाँ बनकर बरसते
आँख के जल

वनों में हिरन अब डरते नहीं
पंखुरी से पंख मिलते जा रहे।

■

12/10/10

हवा सुरीली

देहरी रही पहनती धूपों की जाली
खुशबुओं से भरी लगी यह हवा सुरीली

रुचता नहीं जाल का बंधन
लहराती मछलियों को
आँधियाँ बेचैन हों जितनी
नहीं छूती बिजलियों को

भला-भला लगता है चिड़ियों को इन दिनों
पहनते नीड़ अबीर से रची रंगोली

सूरज उगता नहीं आजकल
बन्द है आँख मौसम की
खुलते आधे दरवाजों में
मन की गंध नहीं छलकी

कौन ओढ़े सुख से यह चादर बुनी हुई
हुई जा रही सरसों के रंग में पीली

घुलता जाता नमक सरीखा
सपने, देहों में, मन में
जीना-मरना साथ लगा है
इसी तरह एक जनम में

नचाते जल को हंसों के जोड़े उजले
गीत बुनी हवा पंखों में हुई रसीली।

■

26/1/10

छोटे-छोटे दुख

बहुत दिनों से यह उदास घर
खुशी नहीं उसमें अब ठहरे

उड़-उड़कर आती बाहर से
गड़ जातीं कुछ कीलें
छोटे-छोटे दुख भी होते
कितने बड़े नुकीले

सिरहाने कथरी लपेटकर
सगे दर्द भी हो गये बहरे

मन करता धूप में बैठकर
हँसे और कुछ गाये
तहकर रखी गयी बातों को
फिर-फिर से दुहराये

सेंवारों से भरता पोखर
यादों के कोलाहल गहरे

जुड़ी नहीं जमीन पाँवों से
फिर ऊँचा उठने में
बिखर गया पहला पहचाना
सपना यह लिखने में

बदल न पाई घर की चादर
दरवाजे परदों के पहरे।

■

25/1/10

ये दिन भले

तुम हँसी तो
दीप मंदिर के जले

साँकलों की फुनगियों से धूप उड़कर
गमक बेला की लिये जा लगी छत पर

साँझ महकी
हवा महुआ के तले

गुनगुनाते सुबह से गीत के सागर
झरनों से किसलयों के झर रहे स्वर

झिलमिल दिये
गले तुम जब से मिले

गूँजती रहती पूरे पखवारे तक
उड़े नीलराग नभ का सीवान तलक

देख तुमको
हँसते चले दिन भले।

■

29/12/09

बिन बादल के

पानी की बौछार बनी
या सावन का मल्हार
पाँव धरती पर रखती है

कभी नीड़ से दीखेगी तो
अधिक लुभाएगी यह दुनिया
गंधों के पीछे जाने से
कभी नहीं मिलती हैं मणियाँ

फागुन का शृंगार बनी
या चैती मगन बयार
कान खोले ही रखती है

पाँवों को जितना फैलाओ
चादर का तो मुँह न खुलेगा
दरवाजे पर इन्द्रधनुष का
पैदल आना अधिक दिखेगा

अगहन का मनुहार बनी
या आसिन का अभिसार
झुकाकर आँखें रखती है

बिन बादल के चाहे जब भी
मौसम फूही बनकर बरसे
फूलों के मकरन्द हास में
इतराये खुलकर जिये बसे

फूलों का दरबार बनी
या रूपों का त्योहार
धूप को वश में रखती है।

■

28/12/09

फूलों के कालीन

फूलों का खिलना
ऋतु का बदलना
तब खूब होता था

फूलों के कालीनों पर
उतरती थी उजली परी
आसमान से लगती थी
दुपहरी फूही की झड़ी

सूरज का उगना
तारों का जगना
तब खूब होता था

चुपके खपरों पर चढ़कर
ठहर धीरे उतर जाते
धूपों से बगावतें कर
चिड़िया को भी समझाते

नदी का उफनना
लहर का भिंगोना
तब खूब होता था

आपस में भिड़ जिद होती
छाँह को भी पकड़ने की
दीवार की पीठ बैठे
पतंग संग उतरने की

पिपही का बजना
धूप सा सँवरना
तब खूब होता था।

■

28/12/09

श्रेयसी तुम हो

बहुत दिनों से देखा हमने
ऐसा ही सपना

अब तो लगने लगा श्रेयसी
तुम हो शालीना

बात तुम्हारी अनबन थोड़ी
मन में खुशियाँ पाले
ऐसा लगे संग गौरी के
घर में बने शिवाले

सावन-भादो के साथ रहे
घर में चैत महीना

कोई नहीं जानता कब हो
धूप-गीत झरना सा
कब हो जायें गरम हवायें
फूल कहाँ से बरसा

तुम तो जैसे बाग-बगीचे
उड़ती हो मैना

रहती हरदम आँख लगाये
चिड़ियायें इस घर की
कब खिल-खिल कर हँसियाँ जागे
कब दोपहरी सरकी

मन पानी पीने का हो भी
शरबत है पीना

अब तो लगने लगा श्रेयसी
तुम हो शालीना।

■

14/11/09

खिड़की की जाली

तुम हँसती हो
उपवन लगता है घर सारा

सुबह के माथे पर
लिखती प्रार्थनायें
रंग-दिन जैसे थे
अबरख में नहाये

तुम गमकी हो
आँखों में सुख है दोबारा

धूप की जाली में
चमक रंगोली-सी
गूँज एक सुरीली
नदी-लहरों जैसी

तुम जगती हो
पुलक हवायें करे इशारा

इस मकर चाँदनी में
कुछ रेशम सी बुनती
माथे पर ओसाये
मोती जैसे लगती

तुम गाती हो
एक-एक गूँजा है तारा।

■

29/12/09

जेठ की दुपहर

कोमल सुख है कितना
जेठ की दुपहर में
सुस्ताते गाय-बछेड़े-चरवाहे

नाव बनें अनजान नदी की
इतना नहीं समय है
कोई लहर उठा लेने की
मन में नहीं जगह है

माथ झुकाते पहले
गाँव के गहबर में
जाती यह राह जहाँ कहीं चाहे

भींग-भींग गये इस वर्षा में
छाँह के संग दौड़े
भरा अभावों के भावों से
ये मनमौजी भौंरे

नहीं खिलौने होते
मिट्टी के इस घर में
खिले हुए फूल को अधिक सराहे

हँसे आँख तो जग हँसता है
कहीं आँख भी रोती
कोई नहीं हिसाब कि उसकी
आँखें क्या-क्या खोतीं

पतझड़, बंजर, आँधी
रहे सभी नजर में
उभरती रहती है जिनसे राहें।

■

27/12/09

नदी जगी

हवा बही
डाल हिली चम्पा की

फूल है तो बना लेगा राह अपनी
खुशबुओं से भेजकर सौगात अपनी

धूप खिली
खिलना और बाकी

चल पड़ी जब तो पलटकर नहीं देखा
राहों की ठोकरों का नहीं कुछ लेखा

लहर उठी
वेग से उड़ पाखी

रुकी थोड़ा भी तो सुनाई ही पड़ी
सँझवाती की लौ अलग दिखाई पड़ी

नदी जगी
अब कुईं भी झाँकी।

■

27/12/09

पहला नेह

कापी-पेनसिल लेकर बैठ गया बादल
खींच रहा है परबत, नदी, पहाड़

कागा ने जब हाँक लगाई
हड़बड़ा उठी मैना
फँसा झाड़ में अनजाने ही
उसका कोमल डैना
दुहरें थापों का वनों में बजता मादल
याद नहीं फिर कड़की और सुखाड़

कुश की नोंक जड़ी बूँदों को
थाम लिया है जल ने
आँखों की लाली में पहला
नेह लगा है पलने
लगे उतरने खेत में परिन्दों के ये दल
फागुन में हँसता है जहाँ पठार

कंचन कलश भरेगी धरती
आसमान देखेगी
किंशुक पहने सूरज होगा
मन ही मन मुसकेगी
मेहदी, कुमकुम भरकर आँखों में काजल
कभी नहीं होगा कोई पतझाड़ ।

■

27 / 12 / 09

मन के सारे छन्द

मन से सहेज सारी खुशियाँ
गीत-लहरों से उजला हास
लगने लगता अब चिड़िया को
पास आता नीला आकाश

फिर से मेघदूत लिखने में
मन के सारे छंद जुड़ गये
अब अलका तक जाते-जाते
क्यों बादल के पाँव मुड़ गये

सपनों की क्यारी में जैसे
हरे हिलने लगते हैं कास

बेमौसम गानेवालों की
सजी हुई हैं यहाँ कतारें
जेठ मास की दुपहर सजकर
बैठी है इस नदी किनारे

आने वाले झोंकों का तो
दीखने लगता है आभास

अभिलाषाओं की खिड़की पर
जलती छोटी लौ की बाती
सपनों को अगोरने में ही
भाग नींद रातों को जाती

इन्द्रधनुष थामे पलकों का
प्रेम का दुहराया अहसास।

■

25/12/09

बाँध लें हवा को

फेंक दें बीच से दरके हुए ये आइने

पात पीले रुख नहीं
मोड़े हवाओं का
फाँकें होती खुशियों
का रेला है रुका

फूल खिलकर धूप के बदल देते मायने

देख ले उड़ानों को
पाँखों में पाखियाँ
नदियों की लहरों पर
गूँज बने साखियाँ

बाँधती दिशाओं को सुरभि अपने दाहिने

मुस्कान ओढ़ मछलियाँ
गीत की तान भरी
कुहासे पार करती
नरम धूप की तरी

चले मौसम दुबारा खुद दुआयें मांगने।

■

24/12/09

मकर चाँदनी

चाँदनी की नदी में मछली सी चल के
रात-रात भर हम गीत गायें फसल के

हरियाली की चर्चा करें
फिर-फिर हरे हो लें
सपनीली भाषाओं की
खुशी में सुर घोलें

रंगों के रागों को दुहरायें कल के

फूलों के खुशबू-कुमकुम
भीतरी पहचानें
कजरी-चैता की लय पर
चलें खुशी मनाने

मकर चाँदनी को लिखें खत उसी पल के

अंकुर पर आँखें पड़तीं
हलचल होती मन में
पंख खुजाती चिड़िया ने
गीत बुने उपवन में

चहके आक-जवास फुहारों में खुल के।

■

24 / 12 / 09

सुरभि नहाई हवा

केवल बातें नहीं असलियत भी है इसमें
सुरभि नहाई हवा आजकल खाती कसमें

मुकर-मुकर जाती है
अपने कहे वचन से
कुछ देने से डरती
भी है अपने मन से
खुली हुई खिड़की हो हवा समाये जिसमें
हो जाये मालूम सभी को इसकी रसमें

कभी-कभी लगती है
बेहद डरी हुई सी
खुशबू के आखर सी
झुककर खड़ी हुई सी
सुख से जीने की भाषा भरी हुई उसमें
धूप, हवा ये मौसम कुछ भी रहे न वश में

वनपाखी की पाँखों
सी कोमल उड़ान में
नदी लाँघ जाती है
तब दिन के ढलान में
नहीं कभी पड़ती वह इस अनगढ़ी बहस में
एक डाल कचनार छन्द गाता है उसमें।

■

24/12/09

पहली उड़ान में

परदा को बेपर्द करो तो जाने
कहाँ भरे हैं कितने झंझावात

पहली उड़ान में जिन चिड़ियों के पंख कटे
गाढ़ी मिहनत के सब धन भी बेवजह लुटे

खरोंचें कितनी लगी बचाने में
सहज देह मन में पहली सौगात

देर रात को चंदा जब उगते ही डूबे
बर्फ सरीखे पिघल जाये सारे मनसूबे

बाँधे हाथ खड़ी सिवाने घर के
हँसती अपने सपने की औकात

अब चंचल मृगछौनों की चुप हुई कुलाँचें
पागल दुनिया हो तो कोई भी कुछ वाँचे

कटते पेड़ रोयेगी कहाँ हवा
सबके सब उजड़े हैं पीले पात।

■

24/12/09

उठा कोई धुन

ये आंगन की उदासियाँ
और बेहद अकेलापन
बताते सिरज कोई धुन

सामने समय टुकड़े-टुकड़े सच के
बेतहाशा भागे आदमी बच के

ये खुशी की परछाइयाँ
ठहरा सा घर का बचपन
नहीं अपना सा रहा मन

लिखी अँधेरे में रोशनी की कथा
गंधहीन फूल की भीतरी व्यथा

धुआँ पीती खामोशियाँ
दुख की आवाजाही बन
यहीं से गीत कोई चुन।

■

24/12/09

धार-धार हम

दरवाजे पर आ बैठा बाजार
हाट पूरा घर लगता

धूल फाँककर साँसें जोड़ीं
भूखे रहकर धरती कोरी
फिर भी बुनती रही हमारी
आँखों में सुख की फुलकारी

सुने नहीं कुछ आसिन की बैछार
जाट पूरा घर लगता

फूलों को देकर कुछ सपने
खिला लिये अपने आंगन में
बहते रहते धार-धार हम
उफनी नदी एक ले मन में

दीखे से दिख जाता है संसार
घाट पूरा घर लगता

कीचड़ से ही कमल खिलेंगे
बचपन की यह पढ़ी कहानी
कभी हुई सच नहीं तलाशी
हमने रेत-रेत जा पानी

जंगल काट बढ़ाया कारोबार
काठ पूरा घर लगता।

■

21/12/09

आँख भींगी नदी

हादसा-दर-हादसा
कैसे जियेंगे हम

खेत गुजरी बाढ़ का
कैसे जियेंगे हम

उधर चिड़िया की तड़प
सोने नहीं देती
आँख भींगी नदी की
रोने नहीं देती

जल भरा तन नाव का
कैसे जियेंगे हम

नींद में आ-जा रही
बालियाँ फसलों की
घरों की मुस्कानों में
भाषा इन पलों की

जले मन पर ताव सा
कैसे जियेंगे हम

लौटा दे लय कोई
सहज अनुराग भरी
लहर, भँवर सिरजे धुन
कोमल विहाग-भरी

फूल सुलगे आग सा
कैसे जियेंगे हम।

■

19/12/09

ईंट जोड़ते

ऐसे तो ये दिन हैं

ढँके हुए अनगिन पर्त्तों से
खुले महज तो कुछ शर्त्तों से
बँधे-बँधे पल छिन हैं

कहीं मोड़ते, कहीं छोड़ते
देखा गारा-ईंट जोड़ते
हारे-थके कठिन हैं

उठने लगे हवा में गाने
टूटी नदियों की चट्टानें
कैसे कहें मलिन हैं।

■

'परिवेश' - 3, नवगीत अंक, मार्च, 73

हँसती धूप

रंग-विरंगे फूल खिले हैं घासों में
उगे प्रेम के बीज खेत के मेड़ों पर

बहुत साफ हो मौसम
न कहीं धुंधलका हो
सूखे पातों में भी
जीवन-रस छलका हो

बजते हैं संगीत सुरभि के पाशों में
खिल-खिल हँसती धूप ओस के घेरों पर

बिछी चटाई हो या
टूटी खाटें फैली
बाँह किसी की ढँकती
अँगिया हो मटमैली

फिर भी खिलती जवा बहुत उल्लासों में
नाच रही मछली की छाप मछेरों पर

पंखों में भरती उड़ान
खुशबू के बागों में
भीतर की छवियाँ हैं
मन के इन रागों में

अँखुआई है कोंपल आक-जवासों में
नाव गा रही धीरे गीत थपेड़ों पर।

■

12/11/09

आँख नदी की

अपने नहीं झरा करतीं
पंखुरियाँ फूलों की
कोई तो है धूप, हवा, मौसम

आँख मिलाकर सूरज से
जंगल तपता है
धूप-हवा की मिलीभगत
बेहद जलता है

सच को झूठ बता उठती
यह तान बबूलों की
बात-बात में बजा रहे सरगम

चम्पा चुप मौन है महुआ
शाखें झुकी हुईं
मुरझती हुई फुनगी है
आँखें दुखी हुईं

उस आसमान को छूना
चाहे लय कूलों की
कोलाहल में भय है खुशियाँ कम

सहज मिले अनुबंधों से
गलती कहीं हुई
दुहरी हवा नुकीली ने
अपनी बात कही

हरियाली से भरी बाग
में टहनी शूलों की
हुई जा रही आँख नदी की नम।

■

11/11/09

छोटी-छोटी खुशियाँ

जिस पर चलकर तय की मीलों की दूरी
नहीं रहे वे सभी पुराने पुल

थोड़ी खामोशी भी ढेरों हलचल में
आँखों उगती आग और इस बादल में
दिन कितने भी रहे सुहाने ढलते हैं
जैसे मरु में सूख गये पानी पल में

जहाँ बैठकर पर फैलाये चिड़ियों ने
बालू ही बालू फैली है कुल

रोटी बेले या कपड़ों के धोने में
दोनों में ही बजे चूड़ियाँ हाथों की
वैसी आवाजें मन से कब जाती हैं
झुकी प्रार्थना में उठती जो माथों की

खेतों में जो बरसा था जल जीवन का
आज तलक मन की खुशियाँ शामिल

खुले हुए दिन में जैसे कचनारों के
थोड़ी पूँजी भी तो कितनी अधिक लगी
चिड़ियों-फूलों के जैसे रोते-हँसते
छोटी-छोटी खुशियाँ इतनी भली लगीं

पानी पर पानी की बूँदों की छवियाँ
उस पर हँसी तुम्हारी जाती घुल।

■

10/11/09

वह हरा दिन

वह भरा दिन भी
कनेरों की महक से
आ गया था पास

माथ पर गमछा लपेटे
सिहकती उस दुपहरी में
तुम्हें देखा लगा जैसे
खड़ा हूँ मैं कचहरी में

वह हरा दिन भी
पहाड़ी धुन गमक से
हो गया मधुमास

खुशी के जल में नहाये
लौट आते उसी घर में
दीखते हैं नहीं आँसू
उठाये जो आँख भर में

वह बुरा दिन भी
मयूरी की चमक से
हुआ पावस-प्रात

गदबदाती साँझ में जो
मूँदते ही आँख अपनी
तुम दिखे तो झाँप ली थी
आँख से ही आँख अपनी

वह बड़ा दिन भी
उगे सौ-सौ धनक से
लिखे मन की बात।

■

9/11/09

पोखर का मन

गीत नहीं गूँजा कोयल का
बहुत दिनों से

अब तो आधा से ज्यादा
फागुन बीत गया
टुसियाये कनेर पीले
मधुघट रीत गया

कँपा नहीं मन भी पोखर का
बहुत दिनों से

चिड़िया लेकर न उड़ी है
नीड़ों का तिनका
गुलमोहर का नेह नदी से
बीच किनारे चिनका

पनप रहा है मौन नदी का
बहुत दिनों से

जुआ उठाये दोनों कन्धे
दिन फिर मलिन हुआ
कभी न झुकने वाली आँखों
का दुख गहन हुआ

जगा नहीं 'फेकू' मुन्शी का
बहुत दिनों से।

■

6/11/09

चिड़िया की आँखों में

गीतों की पाँती
घर-आंगन
बरसा है पानी

छायी कजली घोर घटा
इतनी चौमासे में
फिर शामिल होती बदली
इन खेल तमाशे में

चिड़िया की आँखों
में अंजन
करता मनमानी

थाह कहाँ होता फुनगी
की हरियाली का
पोरों में बजते मांदर
की लय की लाली का

साँसों के सूतों
में कम्पन
ज्यों भरनी-तानी

ढलकते पत्तों से पानी
फिर पानी पर पानी
ऐसे में कोई भी दुख
हो जाता बेमानी

पाँवों पर हाथों
के कंगन
रंग हुआ धानी।

■

6/10/09

मूरत गढ़ी हुई

सब कुछ तेरा दिया हुआ है
ओ फूलों, चिड़ियाओं
सिर्फ सहेजा है मैंने रंगीन चादरों में

जीते हुए लगा है हरदम
नहीं हँसी जैसा है जीना
बात-बात में सूख रहा है
अपना सारा खून-पसीना

तुमसे ही तो मिला हुआ है
कोमल भली हवाओं
गढ़ती आती हैं मूरतें नील बादरों में

अपने सारे काम-धाम हैं
अलग नहीं अपने जीने से
छन-छन कर आता है जीवन
प्यासे रह पानी पीने से

तुमसे ही तो लिया हुआ है
अक्षर की गरिमाओं
बजती हैं धुनें थापों की नये मांदरों में

अपने जीवन की आँखों में
देकर नये-नये से सपने
बार-बार लौटा लाते हैं
देते नहीं अगन को कमने

तेरा सारा किया हुआ है
गंधों भरी लताओं
गोरा एक दिखा बहुत है कई साँवरों में।

■

12/9/09

दिनों पर सुख

मौसमी कल की तरह आना
दरवाजा खुला है

अलगनी पर रख दिये बिखरे हुए कपड़े
आज फिर बादल दिखा दीखे वही नखरे

साँवली अपनी तरह गाना
दिन काजल धुला है

दुख यही पहुँचा रहे सुख के सिवाने
उदासी में खुशी के उठते तराने

चाँदनी तुम गले मिल जाना
सुख छन भर मिला है

नदियाँ कुहासे की सहेजे चले आये
रंग दिन कई सारे आँख में गाये

सावनी खुशियाँ पहन आना
घन का सिलसिला है।

■

14/9/09

पुलकवाली नींद

तुम नदी होते
तुम्हीं से कहा करते
बात मन की

लहर से हम मांग लाते
धार पर बहना
और उल्टी हवाओं में
पाँव थिर रखना

तुम हवा होते
दिशा में रँगा करते
लय सपन की

उड़ानों से पूछ लेते
जमीं की दूरी
एक छोटी हँसी वाली
हाथ की चूड़ी

धूप तुम होते
चमक में लिखा करते
छवि नमन की

हरी पाँखों में उतरती
थकन दिन भर की
पुलक वाली नींद आँखों
में भरी घर की

तुम गगन होते
मेघ की लिखत पढ़ते
सौ जनम की।

■

5/5/09

वर्षा में धूप

हँसी-घुली यह सुबह
चाह जीने की जगा गयी

वर्षा में जब धूप उगे
भींगे कपड़े सूखे
खुशी ले निकले घर से
कल तक जो थे भूखे

ऐसी भाषा अकह
घरों में किरनें उगा गयी

देखा किसी को हँसते
जैसे अड़हुल जागे
लरजती हुई हवा की
धुन पर हिरनी भागे

खुशी की नयी वजह
मन की पंखुरी रँगा गयी

दुखों के बादल घिरते
आँखें उदास घर की
बूँद रेती पर सूखी
जैसे बिजली कड़की

आस-पास की तरह
बाढ़ के तिनके जला गई

■

9/5/09

आज का दिन

कल की तरह दिन आज भी
राजी-खुशी गया

देख रहे इन बालियों में
मुस्कानें खेत के अधरों की
अंगिया पीली लाल पाढ
की साड़ी पहने मुखड़ों की
भली सी आहट है आती
उजले हिरन-खरगोशों की
धुनें शहद-घुली गुनगुन की
लिखी मेड़ों पर भँवरों की

ढलती दुपहर का मुख भी
हँसता हुआ गया

गुनगुनी सी धूप सुबह की
रँगी छानों-दीवालों पर
चूनर पहन फसल रबी की
लहरती हाथों-गालों पर
यह अनमोल प्यार मजूरी
मिला करती है फागुन में
जैसे खिलते फूल गुच्छों में
नरम गमलों के भालों पर

अपना सब गत-आगत भी
हँसता कमल हुआ

घरों में सरदी के माथे
यह जलती हुई अँगीठी
खोजे अब नदी में कोई
वह खोयी हुई अंगूठी

ऐसी छोटी-छोटी हरी –
हरी खुशियों के सिरहाने
लगती हैं दुखों की सारी
लिखी परिभाषायें झूठी

इन चूड़ीवाले हाथों
का संगीत नया।

■

12/1/09

अँकुराते सपने

हँसती है तो घर को
फागुन-फागुन करती है
यशी नाम की हँसी
भर दिन गुनगुन करती है

हाथ रोप दीवारों पर
ज़ब चलना सीख रही
घर में छोटे पाँवों की
कुल छापें दीख रहीं

अपनी भाषा में गा
सुबह सगुन वह करती है

रखे हथेली आँखों पर
जब अँकुराते सपने
रोने पर सावन में मोर
नाचते हुए इतने

धूप-हवा की खुशबू
वह बचा मगन रहती है

ओस-रँगी जवा-पंखुरी
पुरवा कास वनों की
साथ-साथ हिलतीं-कहतीं
यादें कथा छनों की

आते फूल कनेरों
में रितु सरगम बुनती है।

■

25/3/11

किताबें धूलों की

फूल-पात आने वाले हैं
संग-संग फागुन के
हरे-हरे हो रहे पात पुरइन के

पढ़ते-पढ़ते सोई हवा
किताबें धूलों की
फुनगी-फुनगी नाच रही है
खुशी बबूलों की

बरसे सोने पगडंडी पर दिन के

मौसम आया रेत-रेत
होकर चलने का
कई 'गीतगोविन्दम्' की धुन
फिर-फिर बजने का

बिखरे आंगन में धूपों के तिनके

हँसकर अब नहीं है हिलती
ओसायी पंखुरी
फिर भी रितु की नमी आँजकर
पर्त-पर्त बिखरी

भींगे नेह-राग में मादल मन के।

■

25/3/11

कैसे कहते लोग

कभी राह उजाला रोके
ऐसा हुआ नहीं

कैसे कहते लोग कि उनको
फूल पसंद नहीं
वह कविता का भावक
रुचते छंद नहीं

एक उदासी नये सपन से
ही वह बँधा नहीं

लहरों को रोका है
बाढ़ में नदी की
घास उड़ानेवाली
जिद में पछिया की

उसकी करुणा कैसी जिसमें
गीत बसा नहीं

मन में बाग लगाये
दिन-दिन भर सींचे
गाड़ी का पहिया बन
कर उसको खींचे

सँझबाती में जलने वाला
बना दिया नहीं।

■

14/10/10

आँक रही चिड़िया

अभी-अभी उगते अंकुर को
ताक रही चिड़िया
अपने-अपने में दुनिया को
आंक रही चिड़िया

कभी हिसाब लगाई नहीं
मनोरथ के पिछले
अब लगता है कितने बहुत
अकारथ वे निकले

पोखर के नीचे की हलचल
झाँक रही चिड़िया

कितनी दूर चली पर आकर
रुकती उसी ठिकाने
मन में कोलाहल भर देते
नाते-नेह पुराने

ऊब, उदासी यही चलाती
चाक रही चिड़िया

सूखे हुए पुआलों के हैं
ढेर लगे से आगे
जितना भी पग आगे बढ़ता
उतना पीछे भागे

फिर भी अपने कुनबे की है
धाक रही चिड़िया।

■

14/11/10

पानी पर पानी

आँधी जैसा बढ़ा आ रहा
बजा रहा है तासा

ये घनघोर घटायें बादल
गाता है चौमासा

भींग रहे पत्तों से पत्ते
पानी पर पानी
टूटे सब बंध सपन के
लगते बेमानी
जाने कितनी बार दे गया
यह सूरज भी झाँसा

पंखुड़ी के नये पड़ोस में
दुबकी हुई हवा
लौटी चिड़िया के घर से
अपना समय गँवा
पलक की देहरी पर कोई
प्रेमगीत गूँजा सा

आँखों में पतला धागा
है नेह के डर का
कोशी के कछेर में है
मिट्टी के घर सा
इस भींगे दिन में छोटा भी
लगता बहुत बड़ा सा।

■

28/1/10

खुशी के आँसू

उनके घरों की तस्वीरें हँसती हैं
अपने घर की दीवारें रोती हैं

जोड़ रही उंगली पर आधे
अपने बीते दिन को
कितने कब भूखे सोये बच्चे
लगे गड़ाँसे मन को

बिना जले वह धुआँ-धुआँ होती है

दिनों से दीखा कुछ नहीं कभी
खुशी के आँसू जैसा
दरवाजे तक बहुत उड़ा हुआ
है कागज साँसों का

बदली हुई हवा नारे बोती है

नींदों भरे सपनों से उसको
हासिल नहीं हुआ जो
संगीत को उम्मीद के सुनते
जिला-जिला रखती जो

कठिन हौसले ही मन के मोती हैं।

■

20/11/09

इसी शहर में

इसी शहर में ललमनिया भी
रहती है बाबू

आग बचाने खातिर कोयला
चुनती है बाबू

पेट नहीं भर सका
रोज के रोज दिहाड़ी से
सोचता मन चढ़कर गिर
जाये ऊँच पहाड़ी से

लोग कहेंगे क्या यह भी तो
गुनती है बाबू

चकाचौंध बिजलियों
की जब बढ़ती है रातों में
खाली देह जला
करती है मन की बातों में

रोज तमाशा देख आँख से
सुनती है बाबू

तीन अठन्नी लेकर
भागी उसकी भाभी घर से
पहली बार लगा कि
टूट जाएगी वह जड़ से

बिना कलम के खुद की जिनगी
लिखती है बाबू।

■

13/11/10

बच्चा की आँखें

जब-जब होती बारिश
ऊपर मेघ गरजता है
चिपक छाती से बच्चा
कितनी बार चिहुँकता है

चूती है छानी भींगती
घर में है सुजनी
उड़ाती है पछिया सरदी
की है आँख तनी

है चिथड़ा भी न बचा
ओठ बच्चे का सिलता है

मिला समय यह ऐसा जहाँ
छिने हवा-पानी
दुबकी बया पाँख दबाये
मन में हैरानी

पास-परोस बिरिछहै
जड़ से नहीं सरकता है

भरे पड़े बाजार इतने
रंगीन खिलौने से
बच्चा की आँखें लगती हैं
खाली दोने से

दुखता दुख पसली का
वह दिन-रात सुलगता है।

■

3/4/11

आत्म परिचय

नाम – शान्ति सुमन

जन्म – 15 सितम्बर, 1942

शिक्षा – एम० ए०, पी-एच० डी०

प्रकाशित कृतियाँ – **गीत–संग्रह** – ओ प्रतीक्षित - '70, परछाई टूटती - '78, सुलगते पसीने - '79, पसीने के रिश्ते - '80, मौसम हुआ कबीर - '85, तप रहे कँचनार - '97, भीतर-भीतर आग - '02, पंख-पंख आसमान - '04 (चुने हुये एक सौ एक गीतों का संग्रह), एक सूर्य रोटी पर - '06, धूप रँगे दिन - '07, मेघ इन्द्रनील - '91, (मैथिली गीतों का संग्रह)
कविता–संग्रह – समय चेतावनी नहीं देता - '94,
सूखती नहीं वह नदी - '09,
उपन्यास – जल झुका हिरन - '76
आलोचना – मध्यवर्गीय चेतना और हिन्दी का आधुनिक काव्य -'93

सम्पादन – 'सर्जना', 'अन्यथा' (मुजफ्फरपुर), 'भारतीय साहित्य', 'कन्टेम्पररी इन्डियन लिटरेचर' (दिल्ली), 'बीज' (पटना), देश-विदेश की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में रचनायें प्रकाशित। देश के विभिन्न आकाशवाणी एवं दूरदर्शन केन्द्रों से गीतों की रिकार्डिंग एवं प्रसारण। गणतंत्र की पूर्व संध्या पर सर्वभाषा कवि सम्मेलन (दिल्ली) में तमिल कविता का हिन्दी में अनुवाद-पाठ।

सम्मान और पुरस्कार – बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् पटना से साहित्य-सेवा सम्मान से सम्मानित एवं पुरस्कृत, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से कविरत्न सम्मान, बिहार सरकार के राजभाषा विभाग द्वारा महादेवी वर्मा सम्मान से सम्मानित एवं पुरस्कृत, अवन्तिका (दिल्ली) द्वारा विशिष्ट साहित्य-सम्मान, मैथिली साहित्य परिषद् से विद्यावाचस्पति सम्मान, हिन्दी प्रगति समिति द्वारा भारतेन्दु सम्मान। इनके अतिरिक्त नारी सशक्तीकरण के उपलक्ष्य में सुरंगमा सम्मान एवं विन्ध्य प्रदेश से साहित्यमणि सम्मान। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से 'साहित्य भारती' का सम्मान (2005) तथा उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा 'सौहार्द सम्मान' (2006) से सम्मानित एवं पुरस्कृत।

विशेष – पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, महन्त दर्शनदास महिला महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर (बी० आर० ए० बिहार विश्वविद्यालय की अंगीभूत इकाई)

सम्प्रति – स्वतंत्र रचना-कर्म

स्थायी संपर्क – मीठनपुरा, वी० सी० गली, क्लब रोड, रमना, मुजफ्फरपुर - 842002 (बिहार), दूरभाष : 0621-2270895

वर्तमान संपर्क – श्री अरविन्द, 36, ऑफिसर्स फ्लैट, जुबली रोड, नार्दर्न टाउन, जमशेदपुर - 831001 (झारखण्ड), मो० - 9430917356

डॉ० शान्ति सुमन हिन्दी गीतकाव्य की शिखरस्थ पहचान से जुड़ी एक ऐसी विदुषी कवयित्री हैं जिन्होंने सच्चे अर्थों में गीतों को जिया है अथवा कह सकते हैं, जीवन की विविधआयामी सोच के साथ गीतों में समन्वित हुई हैं, गीतों से जुड़ी हैं। सामान्य मनुष्य की झोली भर पीड़ा और मुट्ठी भर खुशी उनके समग्र वैचारिक पटल को स्पंदित करती है। यही कारण है कि नवगीतकारों की अव्यवस्थित भीड़ में वह सम्मिलित नहीं हैं। उनकी अपनी संवेदनायें हैं, अपनी सोच है और अपने मानसिक उद्वेग हैं। जनाग्रही जीवन की कटुता से वह अलग नहीं हुई। निम्नमध्यम वर्ग की त्रासदी और अभावजन्य दैनंदिनी में भी वह सुख के क्षणिक अनुभास ढूँढ़ लेती हैं।

— डॉ० विष्णु विराट

कवयित्री के जनवादी गीतों का यह स्वभाव उनके प्रायः सभी संग्रहों में विभिन्न भंगिमाओं में विद्यमान है। कहीं पर - आंगन के टूटने की पीड़ा है तो कहीं माँ-बहनों के आटे सा पिसने का दर्द, कहीं सूदखोरों के कर्ज से दबे किसानों की कराह है तो कहीं जमींदारों की दमन चक्की में खेतिहर- मजदूरों के पिसे जाने की आह, कहीं सामाजिक विसंगतियों से उत्पन्न जानलेवा परिस्थितियों से जूझने के दृश्य-बिम्ब हैं तो कहीं सत्ता के आतंकवादी आइने में अन्याय और अत्याचार के घिनौने प्रतिबिम्ब और कहीं इनसे उबरने के लिये जनसाधारण का आह्वान है तो कहीं नये समाज की स्थापना के सुनहरे सपने। उनके सारे गीत परिस्थितियों एवं जीवनानुभवों से निःसृत, काव्यात्मक भावनाओं से ओत-प्रोत और नयी भाषा-लय में ढले हुए हैं।

पारिवारिक प्रसंगों को रूपायित करने में शान्ति सुमन को महारत हासिल है। रिश्तों के सभी संदर्भों के गीत उन्होंने लिखे हैं। उनके ऐसे गीतों में अभिव्यक्ति की सहजता और शब्दों की तरलता के साथ-साथ दृश्यात्मक बिम्बों की विशिष्टता देखकर आँखें जुड़ा जाती हैं।

— डॉ० मधुसूदन साहा

शान्ति सुमन